प्रथम अध्याय

डॉ. शैकर शेष के व्यक्तित्व और कृतित्व का सामान्य परिचय --

प्रथम अध्याय

डॉ.शंकर शेष के व्यक्तित्व और कृतित्व का सामान्य परिचय --

व्यक्तित्व एवं कृतित्व --

किसी भी लेखक की रचना का विशेष अध्ययन करते समय उसकी जीवनी को देखना महत्वपूर्ण तथा सहायक सिध्द होता है । अत: यहाँ हम डॉ. शंकर शेष के जीवन का सक्षेप में परिचय पाते हैं --

क) जीवनी :

(१) जन्मस्थल : मध्यप्रदेश के छत्तीसगढ नामक जिलेमें बिलासपुर नामक नगर है यह नगर बडा ही सपन्न है । इसे धान के कटोरा नाम से भी प्रसिध्दि मिली थी । उस नगर के चारों ओर साल के सघन वृक्ष हैं । पहाडों और जंगलो से धिरा यह बिलासपुर बडा ही सुहावना दिखाई देता है । इतिहास काल में यह नगर सामंती परिवार का गढ माना जाता था । आज भी इन सामंती परंपराओं का प्रभाव उसी बिलासपुर पर दिखाई देता हैं । यह नगर प्राकृतिक वैभव से परिपूर्ण है, बिलासपुर के चारों ओर ऊँचे ,ऊँचे पर्वत हैं । हरे-भरे धान के खेतोंने शहर को घेरा हैं ।

कलिंग में राजदेव नामक राजा था उसका प्रपोत्र रत्नदेव था । रत्नदेवने प्राकृतिक सुषमा से सजे उस बिलासपुर को अपनी राजधानी बनाया । तब से इस बिलासपुर में सामंती परंपरा शुरु हुई ।

डॉ.शंकर शेष का परिवार इस सामंती परंपरा में पला एक संपन्न परिवार है ।

(२) परिवार : डॉ.शंकर शेष का परिवार एक जाना-माना और सपन्न परिवार था । शेष का जन्म बिलासपुर के इसी सामंतशाही महाराष्ट्री ब्राह्मण

परिवार में हुआ । मराठी के महान समीक्षक प्रा.भिमराव कुलकर्णी द्वारा संपादित वामन पंडितांची सुधा-काव्ये पुस्तक की प्रस्तावना में उन्होंने लिखा है कि मराठी के महान पंत । कवि वामन पंडित शेष घराने के थे, उनका उपनाम `शेष` था शायद यही काव्यत्व या प्रतिभा विरासत के रुप में उन्हें मिली हो । बिलासपुर के इस कुल में २ अक्तूबर १९३३ को शंकर जी का जन्म हुआ हिंदू संयुक्त परिवार की कर्मठता और रुढियों के बीच उनका व्यक्तित्व संस्कारित हुआ ।[१]

डॉ.शंकर शेष के पिता नागोजीराव एक संपन्न परिवार के जिंदादिल व्यक्ति थे । वे बहुतही रसिक स्वभाव के थे । घर में नौकरों की कमी नहीं थी । संयुक्त परिवार होने के कारण घर में बहुत लोग थे । चाचा,चचेरे भाई,माता-पिता थे । आनेजानेवाले भी बहुत थे । मेहमान आते-जाते थे । बिलासपुर में आज भी उनके इस भव्य पुराने महल में चाचा,चचेरे भाई सगे भाई रहते हैं ।

इस परिवार की देखभाल नागोजीराव की पत्नी डॉ.शेषजी की माता दिनरात करती रहती थी । वह सेवाभावी स्त्री थी जो देखभाल में दिनरात व्यस्त रहती थी । वह सुशील धर्मपरायण स्त्री थी । भारतीय आदर्श नारी की वह मूर्तिमंत प्रतिभा थी । घर के सभी लोगोंकी देखभाल में अपने बेटे बेटियों की ओर ध्यान देने के लिए उन्हें बहुत कम समय मिलता तो भी वह अपना मातृ-कर्तव्य नहीं भूलती थी ।

शेष के पिता परंपरावादी व्यक्ति थे । उनका ज्यादातर समय दूसरों के सुख-दु:ख का साथ देने में बीत जाता था । बाहरी काम में वे इतने व्यस्त रहते कि अपने बच्चों की खबर लेने को उन्हें बिलकुल फुर्सत नहीं मिलती थी । वह एक ऐसा जमाना था कि बच्चों के लिए कुछ विशेष करना पडता है यह विचार भी उन लोगों के मन में नहीं आता था ।

नागोजीराव घर की सारी जिम्मेदारी अच्छीतरह संभालते थे । वे बडे क्लासिक आदमी थे । खाली समय वे नाटक संगीत में रुचि लेते । बिलासपुर में `जानकी विलास` थियटर नाम का सामंत परिवार का एक आमोदगृह था आज वह

---

१ प्रा.भीमराव कुलकर्णी - वामन पंडितांची सुधा काव्ये- की प्रस्तावना से उद्धृत ।

' मनहर टॉकीज' नाम से प्रसिध्द है। बाल-गंधर्व जैसे जानेमाने कलाकार भी यहाँ आकर संगीत महफिल सजाया करते थे। नागोजीराव के रसिक तथा नाटय संगीत प्रिय मन को यहीं तसल्ली मिलती थी। संगीत और नाटकों की उनकी रुचि दिन-ब-दिन बढती गयी। संगीत और नाटक उनके जीवन का अंग बन गया था। धीरे-धीरे आप तबला बजाने में निपुण बन गये। थियटर में वे कभी - कभी तबले का साथ भी दिया करते थे। संगीत और नाटक का यही प्रेमी नाटक देखने बिलासपुर से नागपुर भी जाया करता था। कला,नाटय,ऐश्चर्य से सपन्न इस परिवार में डॉ.शेष का जन्म २ अक्तूबर १९३३ में हुआ। नाटक और मंच के संस्कार बचपन में उनपर हो गये थे।

(३) बचपन - पिता नागोजीराव तथा सेवाभावी सेवापरायण माता सावित्रतीबाई के यहाँ डॉ.शंकर शेष ने जन्म लिया। बचपन तो उनका फलेफुले परिवार में बीता। कलाप्रेम और रसिकता तो उन्हें विरासत में ही मिली। संयुक्त परिवार में रहने के कारण उनमें सामुहिकता के सभी गुण आये। बचपन में वे अत्यंत मितभाषी थे। बिलासपुर के इसी संपन्न भरेपूरे घर में ही उनका बचपन बीता।

(४) प्राथमिक शिक्षा - डॉ.शेष की आरंभिक शिक्षा बिलासपुर के प्राथमिक विधालय में हुई। पठन-पाठन में उन्हें काफी रुचि थी। रामायण-महाभारत की कथाओं ने उन्हें आकर्षित किया घर में तो हमेशा संगीत और नाटक की चर्चा होती रहती थी। घर के सुसंस्कृत वातावरण का प्रभाव अनजाने उनके मन को प्रभावित कर रहा था। चारो ओर हिंदी का वातावरण था। प्राथमिक अवस्था से ही उनकी रुचि हिन्दी में थी।

(५) माध्यमिक शिक्षा -- अब शंकर शेष जी का मन सामुहिक परिवार में उब रहा था। उनके उस बडे घर में उनका अपना एक स्वतंत्र कमरा था, यहीं उनको लिखा-पढी चलती थी। मिडल स्कूल से उन्होंने काव्य रचना आरंभ की। तुकबंदी का एक पारितोषिक भी उन्हें मिला था। गणित में उनकी अरुचि थी। साहित्य का प्रेम तो स्कूली शिक्षा में बढ गया। गणित विषय में उनके पिता भी कमजोर

ही रहे थे। स्कूल के मास्टर नागोजीराव से कहते थे कि जब तक मॅट्रिक में गणित अनिवार्य है तब तक उनका पास होना असंभव है, लेकिन वे उत्तीर्ण हुये यह बात अलग है। तात्पर्य इतना कि गणित की अरूचि परंपरागत थी। शेष का पूरा परिवार रसिक और साहित्य प्रेमी था। उनकी माध्यमिक शिक्षा बिलासपुर के गवर्मेन्ट हायस्कूल में हुअी। इसी समय ही उन्होंने कुछ काव्य रचनाएँ की। आज वे रचनाएँ अनुपलब्ध हैं। जिस तरह उनकी आयु बढ रही थी उसी तरह पठन-पाठन में भी उनकी रूचि बढती गयी। रामायण, महाभारत का आकर्षण था ही वे उनकी कथाएँ सुनते-पढते थे। जब कभी अक्सर मिलता वे रामलिला और रासलिला में अभिनय भी करते थे। संगीत नाटक की चर्चा और घर का अच्छा खासा वातावरण इन सब का असर उनके मनपर अव्यक्त रूप से हो रहा था। स्कूल में पढते समय वे कहानी, कविता आदि की रचना करते थे। स्कूल में और बिलासपुर के नगर में हिन्दी भाषा का ही प्रयोग होता था। हिन्दी राष्ट्रभाषा होने के कारण भी उसका प्रसार हो रहा था। स्कूल में अनिवार्यतासे हिन्दी का अध्यापन होता था। इसके परिणाम स्वरूप शैकर शेष भी हिन्दी की ओर आकर्षित हुये। माध्यमिक स्कूल में निबन्ध, कथा, काव्य की स्पर्धा में उन्हें कुछ इनाम भी मिले थे। ई.स.१९५७ में क्रांति युध्द की शताब्दी के अवसर पर हुयी प्रतियोगिता में उन्हें एक मेडल पुरस्कार में मिला जिसपर एक ओर शिवाजी और दूसरी ओर पार्लमेन्ट का चित्र था।

(६) <u>उच्च शिक्षा</u> - शैकर शेष की हायस्कूल की शिक्षा पूरी होने के बाद उन्हें उच्च शिक्षा देने का निश्चय पिता नागोजीराव ने किया। अब उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए उन्होंने मारिस कॉलेज नागपुर में प्रवेश लिया। एक छोटे से शहर से वे महानगर पहुँचे पर महानगर की संस्कृति उनकी अनुभूतियोंपर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं डाल सकी बल्कि उनके विचारों में अधिक परिपक्वता एवं व्यापकता आयी। यहाँ डॉ. विनय मोहन शर्मा जैसे आदर्श गुरु ने उनकी साहित्यिक रूचि बढा दी।

ई.स.१९५२ से १९५६ तक उन्होंने अपने पठन-लेखन को अच्छी तरह से परिष्कृत किया । कॉलेज जीवन में उनकी साहित्य साधना अधिक तीव्रतर हो गई । विलासपुर में आप इंटर तक रहे । कालिज में भी वे निबन्ध,कथालेखन,कविताओं की प्रतियोगिता में भाग लेते रहे । इंटर मिडियट करने के बाद जब वे बी.ए.ऑनर्स करने नागपुर गये तब उन्हें एक साहित्यिक परिवेश मिला । कॉलेज जीवन तो उन्हें इस रसिकता में अधिक बढावा देता गया । वार्तालाप,वक्तृत्व तो शुरु से था ही पर रेडियोपर कथा-कथन का मौका उन्हें कॉलेज जीवन में ही मिला । सन १९५७-५८ तक कथा कविता की ओर उनका अधिक झुकाव था । रेडियो पर कथा काव्य तथा भाषण देने आदि का भी मौका उन्हें इस काल में मिला । कॉलेज जीवन में उन्होंने बहुत कुछ लिखा । कविताएँ उन्होंने बहुत लिखी पर उनका कोई काव्य संग्रह नहीं निकला । कॉलेज की अवधि में रेडियो जैसा प्रभावी माध्यम मिलने के कारण उनका लेखकीय हौसला बढता गया । डॉ.शेष के लिखे रेडियोरुपक उन दिनों चर्चा के विषय बने थे । नागपुर जैसे महानगरीय संस्कृति के संपर्क में आने के कारण उनकी अनुभूति भी व्यापक हो गयी । सन १९५२ से ५६ तक ४ वर्ष की लम्बी अवधि में डॉ.शेष ने पठन पाठन के साथ लेखन भी जारी रखा । उन दिनों उनकी कुछ फुटकर रचनाएँ पात्र-पत्रिकाओंमें प्रकाशित हो रही थी । कॉलेज जीवन में ही उनके मित्रों ने उन्हें लेखक नाम दे दिया । नागपुर विश्वविद्यालय से सन १९५६ में उन्होंने प्रथम श्रेणी में बी.ए.की उपाधि प्राप्त की । नागपुर विश्व-विद्यालय से ही उन्होंने सन १९६२ में मराठी और हिन्दी कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन ` विषय पर पी-एच.डी की उपाधि डॉ. गोपल गुप्ता के निर्देशन में प्राप्त की । अब शंकर शेष डॉ.शंकर शेष हो गये । सन १९७८-७९ में उन्होंने बम्बई विश्वविद्यालय से लिंग्विस्टिक्स में प्रथम श्रेणी में एम.ए.पास किया ।

(७) व्यवसाय -- शंकर शेष जब बी.ए.पास हुये थे तब जीविका के लिए अनेक पर्याय थे । फिर भी आपने अध्यापक बनना स्वीकार किया । मध्यप्रदेश शिक्षा सेवा में वे भर्ती हुये और बाद में मॉरिस कॉलेज में अधिव्याख्याता बने ।

शेष की होशीयारी जानकर मध्यप्रदेश सरकार ने उनकी` शिक्षा सेवा विभाग आदिम जाति अनुसंधान अधिकारी` के नाते नियुक्ति की । यह नौकरी बहुत ही कठिन थी फिर भी उन्होंने स्वीकार की । उन ३ वर्षों की नौकरी में विलासपुर रायपुर के बीच जो छत्तीसगढी परिवेश है उसकी भाषा का उन्होंने शास्त्रीय अध्ययन किया । उनके घर में एक नौकरानी छत्तीसगढ की भाषा बोलने वाली थी । इस बोली के प्रति उनके मन में जिज्ञासा तो थी ही साथ-साथ अपनापन भी था जिसका उपयोग उन्हें इस शोधकार्य में हुआ । शोध के उपरांत फिर शोध में जूट जाना लेखक डॉ.शेष जैसे प्रतिभा सपन्न व्यक्ति के ही बस की बात थी । मध्यप्रदेश ग्रंथ अकादमी ने इस प्रबन्ध को उसका महत्व जानकर उसे प्रकाशित किया । इस तरह यह नाट्य सर्जक भाषाविद भी बना । अनुसंधान अधिकारी की हैसियत से डॉ.शेष को मध्यप्रदेश के बस्तर,नारायणपुर जैसे परिवेश में काफी घूमना पडा ।

शेष सन १९६८ में पुनश्च मध्यप्रदेश शिक्षा सेवा में शामिल हुए । दो वर्ष उन्होंने भोपाल के ` हमीदिया कॉलेज ` में हिन्दी का अध्यापन किया । सन १९७० में सरकार ने दुबारा उनकी नियुक्ति कर मध्यप्रदेश ग्रंथ अकादमी का सहायक संचालक बनाया। यह सरकारद्वारा किया उनका सन्मान ही था ।

यह नौकरी छोडकर डॉ.शेष भारतीय स्टेट बैंक में आ गए । स्टेट बैंक के बम्बई स्थित केंद्रिय कार्यालय में वे राजभाषा विभाग के मुख्य अधिकारी बन गये । इस प्रकार अपनी नौकरियाँ सँभालते वे लेखन कार्य भी करते थे ।

(८) <u>शरीर</u> - डॉ.शेष जी तबीयत से मोटापा की ओर झुके थे । उनकी ऊँचाई ५ फूट ४ इंच थी । लम्बे घुंगराले बाल ,नाक थोडीसी चपटी,विशाल भाल प्रदेश,ओठों में अजीब मुस्कराहट,आँखों में भावपूर्ण तेज ऐसा उनका व्यक्तित्व था जो दूसरों को प्रभावित करता था ।

(९) <u>पोशाक</u> -- शेष जी की पोशाक सीधी-सादी थी । वे बाहर जाते समय पतलून और कुर्ता पहनते थे । घर में पाजामा और बनियन रहता था । शेष को साफ और सफेद कपडे पहनने का शौक था ।

(१०) आदतें -- वे सुबह देर से उठते और उठते ही चाय पीते-पीते अखबार पढते । आराम से चाय की चुस्कियाँ लेते थे । नींद के वे बहुत प्यारे थे । वैसे तो दोपहर के समय भी वे नींद चाहते पर नौकरी तथा अन्य काम में व्यस्त रहने के कारण दोपहर की नींद बहुत कम समय मिलती थी । चाय खत्म होने के बाद घरवालोंसे बातें या गपशप करते बैठते थे । अपने बच्चों से भी वे घण्टों बातें करते रहते । वे बहुत ही बोलते थे । बोलना उनका स्वभाव धर्म था । रात में बहुत देर जागकर के पढते रहते थे । खाने के बारेमें डॉ.हसमनीस कहते हैं — उन्हें खाने के लिए हमेशा अच्छी अच्छी चीजें लगती । नाटक से जीतना प्रेम था उतनाही उनका खाने से भी था ।[२] इस प्रकार जीवन में सभी बातों में रस लेनेवाले वे जीव थे ।

(११) मृत्यु -- बम्बई जैसे महानगर में कोलाहलमय वातावरण था । इस कोलाहल से दूर डॉ.शेष शांति की गोद में विश्राम करने,छुट्टियाँ लेकर अपनी पत्नी के साथ जब श्रीनगर गये मानो मौत भी उनके साथ-साथ चलकर वहाँ गयी थी । २८ अक्तुबर १९८१ में मृत्यु ने उन्हें उठा लिया और नाटक जगत के इसी मसीहा को वह अपने साथ ले गयी । २९ अक्तुबर को सुबह उनके निधन के दु:खद समाचार आकाशवाणी ने जब दिये तब लाखों - करोडों आँखें अनायास आसुओंसे बहने लगी वे जीवन के नाटक से हमेशा के लिए चले गये लेकिन उनकी याद युग-युग तक रहेगी जब तक उनके नाटकों का मंचन होता रहेगा डॉ. शेष की आत्मा अशेष बनकर वहाँ खडी होगी । आज इनका शरीर हमारे बीच नहीं है किन्तु उनके नाटकों में उनके व्यक्तित्व की जो सुरभि है वह अनंत काल रहेगी और हमें उनके अस्तित्व की अनुभूति कराएगी जिसे काल के क्रुर हाथ हमसे नहीं छीनकर ले जा सकते ।

(ब) व्यक्तित्व --

१) महान व्यक्तित्व -- डॉ.शेष का जन्म याने एक महान व्यक्ति का जन्म था । इस प्रतिभा सपन्न नाटककार ने एक सांमती परिवार में जन्म लिया । परन्तु उनका व्यक्तित्व महानता से युक्त था । उनके महान व्यक्तित्व के बारे में प्रमिला

---

२ मधुकर श्री हसमनीस - शंकर शेष के नाटकोंका अनुशीलन - पृ.३० ।

काले कहती है " क्या छत्तीसगढी की माठी ने यह कल्पना की होगी कि ये दिन उसका यह सुपुत्र उसके कण-कण को महकाएगा, क्या आँखों की अल्हड लहरे यह सोचती होंगी कि उसके तटपर जन्म लेनेवाला 'शेष' उनको कभी अशेष नहीं होने देगा[३]।"

(२) मिलनसार व्यक्तित्व - डॉ.शंकर शेष के बहुत सारे दोस्त थे। एक बार जो आदमी उनके संपर्क में आता उनका दोस्त बनकर ही रह जाता था। उनकी इस मिलनसार प्रवृत्ति से उनका लोकसंग्रह बढ गया था। उनके दोस्त सभी क्षेत्र के थे। आदिम जनवासी से लेकर नाट्य निर्देशकों तक के उनके मित्र थे। वे घर में सभी के साथ जैसा आत्मीयता का सलूक रखते बाहरवालोंसे भी उसी तरह का बर्ताव करते थे। उनका इस तरह का व्यवहार देखकर सभी लोग उनके पास आते थे। आने-जाने वालों से वे घुलमिलकर बातें करते थे। बातें करना उनका एक शौंक ही था। चाहे विद्यार्थी हो या पत्नी या बच्चे, जो कोई संपर्क में आता वे उससे घण्टो बोलते रहते थे। उनकी बातों में मिठास थी शब्दों में जादू था जिससे वे जल्द ही लोगों में अपनत्व निर्माण करते थे। जिस किसी के संपर्क में आते उसे अपना बना लेने की क्षमता उनमें विद्यमान थी। वे अजात शत्रु थे। उनके मिलनसार स्वभाव के कारण ही यह संभव हुआ था।

(३) आत्मसुधारवादी व्यक्तित्व -- डॉ.शेष स्वयम को पूर्ण आदमी नहीं समझाते थे। जब कभी कोई रचना लिखते तो वह रचना सब को पढकर दिखाते। इसमें उनकी आत्म सुधार की भावना दिखाई देती है। वे अपनी रचनापर अन्य लोगोंकी राय लेते और किसी की राय पसंद आती तो सशोधंन भी करते थे। उनकी शायद ही कोई रचना होगी जो उन्होंने एक बार लिखी हो। अपनी किसी रचना की पूर्तितक वे बेचैन रहते थे। अपने नाटकों के मंचन के समय वे निर्देशक को पूर्ण आजादी देते थे। यह उनकी आत्मसुधार की ही प्रवृत्ति थी।

(४) चारित्र्य संपन्न -- डॉ.शंकर शेष ने अपने जीवन में बहुत सारे पद भार सँभाले, मान-सम्मान प्राप्त किये तथा समृध्दि भी पाई किन्तु वे हमेशा चारित्र्य की ऊँचाई पर बने रहे। इस विषय में डॉ.सुनीलकुमार लवटे ने सही कहा है --

---

३ डॉ.मधुकर श्री हसमनीस - डॉ.शंकर शेष के नाटकोंका अनुशीलन - पृ.३१।

' डॉ.शेष की जिन्दगी समृध्दि और सम्मान में बीती परन्तु समृध्दि और सम्मान के नशेमें वे कभी बदचलन नहीं हुए ।'[४] ऊँचे पद पर भी अपनी सज्जता को बनाए रखना डॉ.शेष के चरित्र की विशेषता थी । चरित्रहीनता उन्हें कभी पसंद नहीं आती थी । क्योंकि वे स्वयं सतशील थे ।

(५) विनम्र तथा पुस्तक प्रेमी -- डॉ.शेष विनम्र स्वभाव के थे । बडे अधिकार और सम्मान होते हुए भी वे कभी उध्दत नहीं बने । अपने नौकर चाकरोंसे उनका व्यवहार अत्यंत नम्रता का था । आदिम जाति अनुसंधान अधिकारी के नाते काम करते समय उनका गरीब और अनपढ आदिम लोगों के साथ संबंध आया था । उनके साथ भी वे अत्यन्त विनम्रता से व्यवहार करते उनसे प्रेम करते थे ।

डॉ.शेष को शुरु से ही किताबे पढने का शौक था । छोटी-बढी जो भी पुस्तकें उनके हाथ लगती वे पढ कर ही उन्हें रखते । बढती उम्र के साथ-साथ उनका यह शौक भी बढता रहा । श्रीमती सुधा शेष ने बताया कि रात-रात भर वे पढते-रहते और सबेरे पढी पुस्तक की चर्चा घरवालों या दोस्तोंसे करते रहते थे । ' किताबों को इकट्ठा करना उनका एक शौक था ।सारी दुनिया से किताबों कों खरीद लाते थे ।'[५] किताबों से उनके इस प्रेम ने तो गृहस्थीपर अतिक्रमण कर दिया था ।

(६) चिंतनशील तथा कुशल प्रशासक -- डॉ.शेष जो भी कोई बात पढते उसपर वे बहुत चिंतन करते थे । हर बात को अपनी नजर से समझ लेने की कोशिश करते । वे कभी-कभी आँखें बंद करके भी किसीबात पर चिंतन करते यह चिंतन उनका व्यक्तित्व समृध्द करता रहा ' फन्दी ' नाटक लिखते समय उन्होंने बताया है -- ' पिछले एक साल से मैं बराबर ' फन्दी ' के साथ जी रहा हूँ ।'[६]

---

४ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.६ ।

५ डॉ.प्रकाश जाधव - डॉ.शंकर शेष का नाटक साहित्य - पृ.१७ ।

६ डॉ.शंकर शेष : ' फन्दी ' नाटक के प्रस्तावना से उद्धृत ।

प्रशासक के रूप में डॉ.शेष का अधिकांश जीवन काल बीत गया था । प्रशासक के लिए आवश्यक ऐसा गंभीर व्यक्तित्व उनके पास जरूर था पर ऐसा होकर भी अनावश्यक रूप से वे कभी गंभीर नहीं होते थे । उनकी गंभीरता में रसिकत्व की झलक थी । प्रशासन में उन्होंने कभी अधिकार मद का प्रदर्शन नहीं किया । सभी से मिलजूलकर बर्ताव करने की उनकी आदत थी । कॉलेज के छात्रों के साथ भाई चारा रखते तो अपने अधिनस्थ कर्मचारियों के साथ अपनत्व रखते थे । फिर भी किसी काम में ढील वे बर्दाश्त नहीं करते थे । वे एक कुशल प्रशासक थे । तभी तो यह संभव रहा ।

(७) <u>आदर्श अध्यापक</u> - सन १९५६ में बी.ए.प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने के बाद जीविका के अनेक मार्ग होते हुए भी डॉ.शेष ने अध्यापक बनना स्वीकार किया क्योंकि उनमें अध्यापक की सहज प्रवृत्ति थी । यह अध्यापक की प्रवृत्ति घर में भी कार्यरत रहती । वे अपनी हर नयी रचना अपने परिवार को पढकर सुनाते थे । छात्रोंसे वे अत्यन्त प्रेम भाव रखते थे । उचित बात के लिए वे छात्रों कों फटकारते थे । छात्रों कों चारित्र्यसंपन्न रहना चाहिए यही उनकी चाह थी । आजकल की शिक्षा में जो भ्रष्टाचार फैला है,विद्यार्थियों में जो अनुशासनहीनता तथा गुण्डा-गर्दी फैली है उसका वे सख्त विरोध करते । हमारा पवित्र शिक्षा क्षेत्र राजनीति से अलग रहे ऐसा वे मानते थे । ` एक और द्रोणाचार्य ` नाटक में उनके ये शिक्षा संबंधी उदात्त विचार प्रकट हुये हैं । ` शिक्षाकी` उनका धर्म था पैशा नहीं । शिक्षा क्षेत्र को वे जिंदादिल क्षेत्र मानते थे ।

(८) <u>हँसोड व्यक्ति</u> - डॉ.शेष हँसी मजाक में बेहद रस लेनेवाले व्यक्ति थे । छुट्टी के दिन तो उनके घर एक महफिल-सी सजी रहती थी । हर इतवार का उनके दोस्त बढी आतुरतासे इंतजार करते थे । घरके सभी सदस्य उनमें शरीफ होते थे । अब ऐसे दिन डॉक्टर साहब अपनी एकाध रचना पढकर सुनाते थे । उसीपर चर्चा होती थी बीच-बीच में गपशप भी करते थे । डॉ.साहब हँसते तो ठहाका मारकर हँसते थे । यह उनका स्वाभाविक गुण था । विचार विमर्श में वे जितने गंभीर रहते थे उतनेही गपशप में प्रसन्न चित्त रहते थे । रात में भी अपनी सहचरी तथा बालबच्चों समेत उनका यह गपशप तथा हँसी के साथ बोलना जारी रहता ।

(९) अच्छा वक्ता - डॉ.शंकर शेष एक अच्छा वक्ता थे। किसी विषयपर वे बोलते तो श्रोतागणोंके मंत्रमुग्ध कर देते थे। उनके वक्तव्य में एक जादू था। विषय का गहरा चिंतन विषय की लगन तथा आत्मीयता से श्रोता तक उसे पहुँचाने की उनकी पध्दति इन सब का परिणाम ऐसा हो जाता कि श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाते। अपने विषय से वे एकात्म हो जाते और विषय का विवरण करते थे। मुँहतोड जवाब देकर वे अपनी स्पष्टवादीता को प्रमाणित करते। उन्हें भाषण के लिए जहाँ तहाँ बुलाया जाता था। कालिज में भी लेक्चर सुनाते समय विद्यार्थी खुश हो जाते थे। एक अधिकारी होने के नाते भी उन्हें सभा में बोलना पडता था।

(१०) आशावादी व्यक्तित्व -- डॉ.शंकर शेष के जीवन में बहुत सारी मुसीबतें आयी। ये मुसीबतें आर्थिक न हो पर अपने प्रशासकीय, शैक्षणिक आदर्शों को बढाते समय कई दुष्ट प्रवृत्तियों का सामना करना पडा` एक और द्रोणाचार्य ` में उसकी झलक हमारे सामने आती है। बडे माने जानेवाले लोगोंकी संकोर्ण मनोवृत्ति देखकर भी वे खीजते थे। इन सभी बातोंका परिणाम उनके जीवन पर हुआ था पर वे कभी निराश नहीं हुए। उनका आशावादी मन उन संकटों को पार करने में उन्हें प्रेरणा देता रहा। सफल नाटककार बनने के लिए उन्हें कुछ देर अवश्य लगी पर वे नाराज नहीं हुये। क्योंकि अपनी क्षमता से वे पूरे परिचित थे। वे कहा करते थे --" कब तक बंद रहेंगे ये धोबी के कपाट ? कभी तो खुलेंगे। मैं निराश नहीं हुँ। दस्तक में दम होगी तो साले मढ-से खुल जाएँगे।" [७] यह वक्तव्य ही उनके आशावादी व्यक्तित्व का प्रमाण है। डॉ.शेष को दिल की बीमारी हो चुकी थी। लोग उनकी इस बीमारी के बारेमें पूछते तो वे कहते" डॉक्टरों ने मुझे दिल की बीमारी (इंजाइना) बताकर इतना सिध्द किया है कि मैं ` दिलवाला आदमी हूँ।"[८] और ठहका लगाते थे।

---

७ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.७।

८ प्रमिला काले - दैनिक लोकस्वर - दीपावली विशेषांक - १९८३।

(११) प्रसिध्दि विन्मुख -- डॉ.शेष प्रसिध्दि से दूर रहते थे। उन्होंने इतनी मौलिक रचनाएँ की फिर भी वे आज अंधेरे में हैं। साधारण से साधारण साहित्यिक भी प्रसिध्दि के प्रकाश में आना चाहता है पर इतना बडा साहित्यिक कर्तव्यशील आदमी विभिन्न प्रकाश माध्यमोंसे दूर रहा इसका कारण ही यह है कि उन्हें प्रसिध्दि से दूर रहना था।" आत्मप्रकाश की अपेक्षा उनमें आत्मसुधार का भाव था"। कई लेखक झूठे अहंकार के कारण अपने लेखन में थोडा भी बदल करने को इन्कार करते हैं पर डॉ.शेष में यह प्रवृत्ति नहीं थी।" [९] उनकी शायद ही कोई ऐसी रचना हो जिसे एक बार लिखा हो। लोगों की राय पसंद आती तो वे फिरसे लिखते। अपने नाटक वे प्रयोगक्षम बनाना चाहते थे। वे प्रयोगधर्मी नाटककार थे।

(ब) कृतित्व --

डॉ.शंकर शेष की प्रतिभा प्रमुखत: एक नाटककार की प्रतिभा थी। उनकी रचनाओंमें अधिकांश नाटक ही हैं। उन्होंने पूरे २० नाटक लिखे हैं, दो बाल नाटक, चार अनुदित नाटक, छ: एकांकी तथा दो फिल्मी नाटक हैं। अत: उनकी कृतियों को हम यहाँ सक्षेंप में देखेंगे --

(१) नाटक --

	नाटक	प्रकाशन साल
(१)	मूर्तिकार	१९५५
(२)	रत्नगर्भा	१९५६
(३)	नई सभ्यता के नये नमुने	१९५६
(४)	बेटोंवाला बाप (अनुपलब्ध)	१९५८
(५)	तिल का ताड	१९५८
(६)	बिन बाती के दीप	१९६८

९ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.१०।

नाटक	प्रकाशन साल
(७) बाढ का पानी	१९६८
(८) बंधन अपने अपने	१९६९
(९) खजुराहो का शिल्पी	१९७०
(१०) एक और द्रोणाचार्य	१९७१
(११) फन्दी	१९७१
(१२) कालजयी	१९७३
(१३) घरौन्दा	१९७५
(१४) अरे ! मायावी सरोवर	१९७४
(१५) रक्तबीज	१९७६
(१६) पोस्टर	१९७७
(१७) राक्षस	१९७१
(१८) कोमल गांधार	१९७९
(१९) आधी रात के बाद	१९८१
(२०) चेहरे	१९७८

इन नाटकोंका हम अलग रूप से तीसरे अध्याय में विवेचन करेंगे ।

(२) एकांकी --

(१) विवाह मंडप (सन १९५७)

यह एकांकी नाटक उपलब्ध नहीं है । `मूर्तिकार` नाटक को यश मिलने के बाद डॉ.शंकर शेष के लेखन को गति आ गयी थी । इस संबंध में डॉ.विनय लिखते हैं -- " इसके पश्चात एक नाटयशृंखला का प्रारंभ हुआ और मध्यम वर्गीयों की समस्याओं और युवकोंकी तत्कालीन समस्याओंपर क्रमश: `बेटोंवाला बाप`, `नयी सभ्यता के नये नमूने`, `रत्नगर्भा`, `विवाह मंडप`, `हिन्दी का भूत`, `तिल का ताड`, जैसे नाटकों का सृजन हुआ : इनका मंचन भी सफल रहा ।"[१०]

१० डॉ.विनय : डॉ.शेष कृत - बाढ का पानी - पृ.५ ।

इस संबंध में डॉ.सुनीलकुमार लवटे लिखते हैं -- " उनके सभी आरंभिक नाटकों की उद्‌भावना मंचन के लिए हुयी थी और आरंभिक सारी नाट्यकृतियों ने सफल मंचन का सौभाग्य पाया था । नाटकों के क्रमश: सफल मंचन ने डॉ.शेष को अब काफी आश्वस्थ बना दिया था । लोगोंकी सराहना से उनमें एक लेखकीय आत्मबल भी दृढ होने लगा था । ऐसे ही काल में उन्होंने अपने आरंभिक एकांकी नाटकों की रचना की । ` विवाह मंडप `,(१९५७) तथा ` हिन्दी का भूत ` (१९५७) उनके आरंभिक एकांकी नाटक है ।" [११]

आगे आप लिखते हैं -- " विवाह मंडप ` का प्रथम मंचन डॉ.शेष के अपने कॉलेज में ही हुआ । मॉरिस के रंगमंचपर उनकी यह दुसरी नाट्यकृति थी जिसके सुगठित अभिनय से लोग उन्हें नाटककार ` मानने लगे ।" [१२]

(२) हिन्दी का भूत (सन १९५७)

` मूर्तिकार ` के संबंध में जैसे एकांकी का नाटक में रूपांतर किया गया था वैसा ही ` हिन्दी का भूत ` के संबंध में भी हुआ हो ऐसा लगता है । ` रत्नगर्भा ` नाटक के परिचय के समय इस दृष्टि से विवेचन किया गया है । अत: संभव है कि डॉ.शेष ने मूल एकांकी के कलेवर में दूसरे एक विषय को जोडकर ` रत्नगर्भा ` की निर्मिति की हो ।

` रत्नगर्भा ` की गौण कथा के रूप में आनेवाले पात्र ` आत्मारामजी ` को हिन्दी का भूत ` कहा गया है जो हिन्दी भाषा से सभी विदेशी शब्दोंको निकाल फेंकना चाहता है । भाषा सुधार के ऐसे प्रयत्नों पर वहाँ व्यंग्य किया है । परंतु मूल एकांकी रूप में उसका कैसा और कथा रूप था यह कहना कठिन है ।

(३) त्रिभुज का चौथा कोण (सन १९७१)

` त्रिभुज का चौथा कोण ` इसे रेडियो रूपक या ध्वनि रूपक कहना उचित

---

११ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.१० ।

१२ वही पृ.१० ।

होगा । कारण यह रेडियो प्रसारण हेतु ही लिखा गया था । डॉ.सुनीलकुमार लवटे लिखते हैं -- " त्रिभुज का चौथा कोण' एकांकी है ।' खजुराहो का शिल्पी' की भाँति यह कृति भी रेडियो प्रसारण हेतु लिखी थी । आकाशवाणी भोपाल से इसका ध्वनिक्षेपण हुआ था ।" [१३]

यह कृति भी अनुपताब्ध है । रेडियो प्रसारण के बाद सितंबर १९७६ में इसका दूरदर्शन से भी प्रसारण हुआ । दूरदर्शन के इस प्रसारण की श्री इकबाल मसूद द्वारा प्रस्तुत समालोचना द्रष्टव्य है जिससे इस कृति के कथ्थ पर भी कुछ प्रकाश पड जाता है । अपने अस्तित्व और प्रगति के लिए संघर्ष रत शहरी मध्य-वर्ग की सीमा नामक युवती अपने कॉलेज के युवा मित्र से विवाहपूर्व संबंधों के लिए इन्कार करती है । परंतु बाद में वही एक बुद्धिवादी कवि,प्रौढ कार्यालयीन अधिकारी तथा उसके वंचक सहायक के हाथों उनका शिकार बनती है । बादमें उसका पुराना कॉलेज साथी उसकी अपराध भावना को नष्ट करने में सफल होता है । इस प्रेम-त्रिकोण का अनिवार्य चौथा कोण उसके बच्चें हैं, जो नारी-जीवन की अंतिम परिणति है ।

(8) पुलिया (सन १९७७)

यह एकांकी नाटक साप्ताहिक' धर्मयुग' में ६ नवम्बर,१९७७ में प्रकाशित हुआ है । समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार के दर्शन कराना इसका उद्देश्य रहा है । लेखक ने हास्य व्यंग्य पूर्ण काव्यमय शैली में भ्रष्टाचार को उजागर किया है ।

भारत में जन-हित तथा यातायात के लिए अनेक रास्तों तथा पुलों का निर्माण कार्य जारी हुआ । जैसे जैसे यह कार्य ग्रामीण इलाके में पहुँचा वैसे-वैसे भ्रष्टाचार में तीव्रता आती गयी । कई रास्तें और छोटे बढे पुल मात्र कागजोंपर बनाये गए और कागजोंपर ही पूर्ण हुए । प्रत्यक्ष नियोजित स्थानपर मिट्टी की एक पाटी भी इधर की उधर नहीं हुई और शासकोय बजेट में कार्यपूर्ति की निर्धारित रक्कम व्यय होती रही । इस घृणा पूर्ण कार्य में इंजिनीयर,ठेकेदार तथा पूर्णता का अंतिम प्रमाण पत्र देनेवाले अधिकारियों से लेकर बाद में की गयी शिकायतों,

---

१३ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.१३ ।

उसकी जाँच करनेवाले अधिकारियों तक सभी मिले होते हैं और अपनी जेबे भरते रहे हैं। ऐसी ही एक घटना का पर्दाफाश प्रस्तुत कृति में हुआ है।

(५) एक प्याला काफी था (सन १९७९)

यह भी एक अनुपलब्ध रचना है। डॉ.सुनीलकुमार लवटे के अनुसार "एक प्याला काफी था" (१९७९) भी लगभग इसी वक्त लिखा गया एकांकी नाटक है"[१४] आगे आप लिखते हैं -- "डॉ.शेष ने 'विवाह मंडप', 'हिन्दी का भूत', 'त्रिभुज का चौथा कोण', 'एक प्याला काफी था', 'अजायबघर' तथा 'पुलियों' शीर्षक एकांकी नाटक लिखे हैं। इनमें से सिर्फ 'अजायबघर' प्राप्त है।" [१५]

अत: यह कृति उपलब्ध न होने के कारण इसके संबंध में परिचयात्मक रूप से भी कुछ कहना कठिन है।

(६) अजायबघर (सन १९८१)

डॉ.शेष का यही एक एकांकी उपलब्ध है। यह एकांकी दूरदर्शन के प्रसारण हेतु १९८१ में उन्होंने लिखा। इसकी विषयवस्तु तथा प्रस्तुति करण के संदर्भ में दूरदर्शन तंत्र तथा उसकी सीमाओंका पूरा ध्यान रखा गया है। इसमें फिल्म की धारा तथा नाटक की प्रकृति दोनों का अद्भूत समन्वय है। शिक्षित एवं अमीर परिवारोंकी कृत्रिम जिंदगी को उभारने के उद्देश्य से यह एकांकी लिखा गया है। डॉ.शेष ने उसमें पात्रों के मानसिक द्वंन्द्व को बढे प्रभावकारी ढंग से चित्रित किया है।

(३) बाल नाटक -- डॉ.शंकर शेष ने अपनी प्रमुख विधा को छोडकर अन्य विधाओं में भी अपनी लेखनी का चमत्कार दिखाया है। डॉ.शेष ने दो स्वतंत्र तथा चार अनूदित बालनाटक लिखे। साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों में उनकी कलम ने संचार किया। नये-नये प्रयोग करने के उद्देश्य से ये नाटक लिखे गये। आधुनिक

---

१४ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.१६।

१५ वही पृ.८१।

नाटक के क्षेत्र में बाल रंगमंच का उतना ही महत्व है जितना कि व्यावसायिक तथा अध्यवसायी रंगमंच का । उनके इन बाल नाटकों का मंचन भी सफल हुआ ।[१६]

(१) बीमारी का इलाज ` सन १९७९ में लिखा गया ।

(२)` मिठाई की चोरी ` सन १९७३ में लिखा गया ।

(३) अनूदित नाटक -- डॉ.शंकर शेष का मराठी भाषापर पूरा अधिकार था । बोल-चाल के साथ-साथ लेखन-पठन के स्तरपर भी यह अधिकार था । मराठी साहित्य के वे मर्मज्ञ थे । विलासपुर से नागपुर आने के बाद मराठी साहित्य से उनका अधिक निकट का संबंध आया । नागपुर जैसे मराठी प्रदेश में आने के बाद मराठी साहित्य से वे अभिन्न रूपसे जुडे रहे । मराठी नाट्यसृष्टि भारतीय भाषा--ओमें एक क्रियाशील और समर्थ नाट्यसृष्टि रही । डॉ.शेष का मराठी साहित्य से प्रेम था । वैसे तो मराठी का और हिन्दी का बोलने,लिखने का ढंग बिलकुल अलग है पर दोनों भाषाओंपर डॉ.शेष का पूरा अधिकार था इस कारण ही उन्होंने इन नाटकों का सफल अनुवाद किया । जिन मराठी नाटकों ने उन्हें आकर्षित किया उनका अनुवाद उन्होंने हिन्दी में कर दिया ।

(१) दूर के दीप -- मराठी के मशहूर नाटककार श्री वि.रा.शिरवाडकर का लिखा` दूरचे दिवे` का अनुवाद सन १९५९ में डॉ.शेष ने हिन्दी में ` दूर के दीप ` नाम से किया ।

(२) पंचतंत्र -- सन १९८१ में उन्होंने मराठी के` पंचतंत्र` का अनुवाद किया ।

उनके अनूदित नाटकों में उल्लेखित हैं --` और एक गार्बो ` तथा` चल मेरे कद्दू ठुम्मक ठुम्मक ` । श्री माधव साखर दांडे के मराठी नाटक` पंचतंत्र` का किया अनुवाद डॉ.शेष की अंतिम साहित्य कृति है ।

(३) और एक गार्बो -- यह कृति` मराठी लेखक महेश एल कुंचवार ने लिखा

---

१६ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.८९ ।

` गार्बो ` नामक मराठी नाटक का अनुवाद है।[१७] पाश्चात्य प्रभाव की यह उपज है। दूसरे महायुध्द के आधारपर यह लिखा है। इसमें सामाजिक विश्लेषण है। वेश्या-गमन करनेवाले लोग सभी क्षेत्रों में देखे जाते हैं। उनकी मानसिक स्थिति का चित्रण इस नाटक में हुआ है। कथा के पूर्वार्ध में गार्बो की वासनापूर्ण जिंदगी का लेखा-जोखा है, तो उत्तरार्ध में वासना से उठी व्यथा का चित्रण है। मराठी नाट्य सृष्टि में तहलका मचानेवाली इस कृति का अनुवाद डॉ. शेष ने बडे कौशल से किया है। यह अनुवाद ` गार्बो ` का सुन्दर भावानुवाद है। मराठी मुहावरों, वाक्य-विन्यास आदि को हिंदी लहजे में ढालकर उन्होंने बडा औचित्य दिखाया है। हिन्दी भाषी इसे ` एक और गार्बो ` को शेष की मूल हिन्दी नाट्यकृति मानते हैं, इसमें ही उसकी सफलता निहित है।

(४) चल मेरे कद्दू ठुम्मक ठुम्म : यह अप्रकाशित अनुवाद है इसे सन १९७३ में शैकर शेष ने अनुवादित किया है। श्री अच्युत वझे के मूल मराठी नाटक चल रे मोपळ्या टुणूक टुणूक ` का यह हिन्दी अनुवाद है। कद्दू आज के दिखावटी मनुष्य का प्रतीक है। उसके मोटापे में स्थूलता का संकेत है। उस मोटापे के अंदर खालीपन है। आज का आदमी दिखावे का प्रेमी है अंदर से वह खोखला है। यह नाटक जीवन के खोखलेपन पर प्रकाश डालता है। संस्कृत प्रभावित इस मूल नाटक में लोकनाट्य परंपरा का शिल्प ढाला है। नाटक के ज्यादातर पात्र शहर के मध्यवर्ग के प्रतिनिधि हैं। माऊराव मकान मालिक हैं। मकान मालिक की परंपरा वे निभाते हैं। वे किरायेदारोंपर अपना रोब दिखाते हैं। पर अपनी संतान के उत्तरदायित्व की ओर वे ध्यान नहीं देते हैं। उनकी लडकी ज्यूडी पढी-लिखी है। पाश्चात्य संस्कृति का उसपर प्रभाव है। इसके कारण वह अपने पिता की उपेक्षा करते तनिक भी नहीं हिचकती। माऊराव के घर बांदेकर नामका एक युवक पेंइंग गेस्ट बनकर आता है। वह माऊराव की लडकी ज्यूडी के प्रेम में फँस जाता है। वह उससे विवाह भी करता है। बच्चा होने तक वे सभी खुश रहते हैं पर बच्चा होने के बाद

---

१७ धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र - ` सारिका ` - अंक ३०१ में प्रकाशित अंश से उद्धृत।

जिंदगी का खोखलापन उन्हें अनुभव होने लगता है ।

आज समाज का हर आदमी स्वार्थी स्वभाव का है ,वह धन एवं सत्ता की दौड में निरंतर व्यग्र है । कद्दू की तरह वह हमेशा इन बातों के पीछे दौडता रहता है और अंत में जीवन का खोखलापन अनुभव करता है ।

(५) उपन्यास :

डॉ.शंकर शेष एक अच्छे नाटककार होते हुए भी कुछ उपन्यास लिख चुके हैं । उनकी प्रगल्भ बुध्दि के कारण ही उन्हें उपन्यास लिखने में सफलता मिली है । क्योंकि इन दोनो विधाओं में वैसे तो बहुत फर्क है ।* नाटक जैसी संवादात्मक एवं साहित्यकारोंको अपनीबात कहने पर नियंत्रण रखनेवाली विधा में अधिकांश लेखन करने वाले डॉ.शेष ने अपनी साहित्य यात्रा में पाडाव के रूप में उपन्यास विधा को अपनाया[१८] यह डॉ.लवटे जी का कथन सार्थ जान पडता है ।

(१) तेंदू के पत्ते - (सन १९५६)

` तेंदू के पत्ते` उनकी आरंभिक औपन्यासिक कृति है । उसके बारेमें अधिक जानकारी नहीं मिलती है ।

(२) चेतना :

उनका यह दूसरा उपन्यास सन १९७१ में लिखा है । शिक्षा व्यवस्था में निहित भ्रष्टाचार को उन्होंने इसमें दिखाया है ।` चेतना` (उपन्यास) और ` बंधन अपने अपने` (नाटक) दोनों की कथावस्तु एक है । इससे ऐसा लगता है कि डॉ.शेष जब अपनी मन की बात नाटकों में पूरी तरह नहीं उतर पाते तो वे उपन्यास का आधार लेते हैं ।

(३) धर्मक्षेत्र - कुरुक्षेत्र --

` धर्मक्षेत्र - कुरुक्षेत्र` उनकी अधुरी कृति है । इसका प्रकाशन सारिका

---

१८ डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.८७-८८ ।

के अंक में प्रकाशित हुआ था पर वह इस उपन्यास का एक अंग था । उसके आधारपर कहा जा सकता है कि वे इस उपन्यास में भीष्म की आत्मकथा लिखना चाहते थे । अपने मन की अधूरी बात को पूरा करने के लिए उन्होंने यह लिखा होगा, इसलिए डॉ.लवटे जी ने इसके बारे में लिखा है --

' महाभारत के कथा सूत्रों को लेकर उन्होंने ' एक और द्रोणाचार्य ' तथा ' कोमल गांधार' लिखा । इन नाटकों में अपनी बात अधूरी पायी तब जाकर ' धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र ' लिखना आरंभ किया ।

डॉ.शेष इसी विधा को अपना लेते तो वे एक सफल उपन्यासकार बन जाते । उपन्यास में पात्रों का चित्रण वे ऐसा सजीव बना देते कि पलभर में वह पात्र शब्दरूप में हमारे सामने खडा रहता है जैसे' धर्मक्षेत्र - कुरुक्षेत्र' में किया हुआ व्यास का वर्णन । ' कुरूप तो था ही वह । पाशशर की प्रतिकृति भयानक रूप से काला रंग । पिंगल जटा भूरे रंग की दाढी मुँछें । आरक्त आँखें वार्धक्य के कारण शिथील मांस पेशियाँ । लटकती झुर्रियोंवाली त्वचा निर्विकार चेहरा ।[१९] किसी चित्रकारद्वारा खींचे पोट्रेट जैसा यह वर्णन लगता है । उनकी उपन्यास की भाषा नाटक की तरह सरल सुबोध और आकर्षक है । शैली में भावतरलता के साथ सौन्दर्य है ।' एक और द्रोणाचार्य तथा' कोमल गांधार' लिखकर डॉ.शेष निरंतर यही महसूस करते हैं कि उन्हें जो महाभारतीय चिंतन प्रस्तुत करना था वह अधूरा रह गया है । इस इच्छा को पूर्ण करने के लिए उन्होंने महाभारत का दुबारा चिंतन मनन किया । दर्शन,विवेचन के लिए नाटक जैसी विधा अधूरी है यह जानकर उन्होंने उपन्यास का आधार लिया और सन १९८० में धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र' की रचना आरंभ की । इस उपन्यास के जरिए समूचे महाभारत पर एक नया दृष्टिकोण वे रखना चाहते थे पर यह उपन्यास भी अधूरा रह गया । इस कृति के बारेमें वे निरंतर बताते रहे यदि यह उपन्यास पूरा होता तो शंकर शेष प्रथम श्रेणी के उपन्यास कारोंकी सूची में बैठ जाते । छोटे-छोटे वाक्योंमें और सुबोध भाषा में लिखा यह उपन्यास भीष्म की आत्मकथा ही है । इसमें महाभारत कालीन समाज व्यवस्था का चित्रण करके मनुष्य और दास में कही हुयी व्यवस्था का विवेचन

---

१९ डॉ.सुरेश गौतम ,डॉ.वीणा गौतम - नाटयशिल्पी शंकर शेष - पृ.४० ।

किया है। दास। भी एक मनुष्य है, उसकी भी अपनी इच्छा,आकांक्षाएँ होती हैं। यदि कोई दासी स्वाभाविक इच्छानुसार समागम का सुख चाहती है,तो अपराध मानना कहाँ तक उचित है ? ऐसे, अनेक सवाल पूछकर डॉ.शेष ने इस उपन्यास को सामाजिक चिंतन का विषय बनाया है। इसके अधूरे पन में भी कुछ पूर्णतत्त्व के दर्शन हमें मिलते हैं।

(६) पटकथा --

उपर्युक्त विधाओं के साथ-साथ पटकथा ,पटकथा संवाद,अनुसंधान प्रबंध,जैसे विभिन्न क्षेत्रों में डॉ.शेष की लेखनी ने काम किया है। पटकथा के क्षेत्र में --

`घरौंदा` तथा `दूरियाँ` ने डॉ.शेष को अमर बना दिया। श्याम बेनेगल तथा सत्यजित रे ने हिन्दी चित्रपट सृष्टि को कलात्मक एवं वास्तववादी बनाने का जो आंदोलन छेडा उस शृंखला की कडी के रूप में डॉ.शेष भी रहे। उनकी ये दोनों पटकथाएँ इसकी सार्थकता दिखाती हैं। इन फिल्मों को प्रेक्षकों ने सराहा किया। दोनों रचनाओं को प्रसिध्द पुरस्कार भी मिले हैं।

(१) `घरौंदा` इस फिल्म को सन १९७८ का आशीर्वाद पुरस्कार प्राप्त हुआ था।

(२) `दूरियाँ` इस पटकथा को सन १९७९ का आशीर्वाद पुरस्कार मिला हुआ था।

(३) सोलहवाँ सावन :

चित्रपट कथा लेखन के साथ डॉ.शेष ने पटकथा संवाद का भी लेखन किया है।

शंकर शेष रंगमंच,चित्रपट,आकाशवाणी ,दूरदर्शन इन सभी के लिए लिखते रहे। हर माध्यम से वे अच्छीतरह से परिचित थे। पटकथा,संवाद आदि क्षेत्रों में लेखन करके चित्रपट जैसे लोकरंजन की भूमिका पर खडे माध्यम को उन्होंने सफलतापूर्वक अपनाया। चित्रपट के लिए किए जानेवाले लेखन में सभी तरह की अभिरुचि होनेवाले दर्शकों को संतोष देना पडता है अत: यह कार्य आसान नहीं

है। फिर भी डॉ.शेष ने इस चुनौती का स्वीकार कर उसमें यश प्राप्त किया हैं ।

(४) पोस्टर --

`पोस्टर` नाटक पर आर.के.विल के निर्देशन में फिल्म बन चुकी है।

(५) घुटन --

`बिन बाती के दीप` नाटक के आधार पर `घरौंदा` के निर्देशक भीमसेन `घुटन` नाम से फिल्म बना रहे हैं ।

(६) आक्रोश --

गोविंद निहलानी की इस फिल्म के कुछ दृश्य डॉ.शेष के लिखे हैं ।

(७) `खजुराहों का शिल्पी` -

`खजुराहों का शिल्पी` नाटक के आधारपर `श्रेष्ठ निर्देशक वी. शांताराम `खजुराहों का सपना` नाम की फिल्म बनाना चाहते हैं।" २०

(७) अनुसंधान कार्य --

(१) मराठी हिन्दी कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन --

डॉ.शेष मराठी तथा हिन्दी दोनों भाषाएँ अच्छी तरह समझते थे। मराठी और हिन्दी साहित्य के नित्य संपर्क से उन्हें इस प्रबंध की प्रेरणा मिली। इस प्रबंध के लिए उन्हें डॉ.गोपाल गुप्ता का मार्गदर्शन मिला । नागपुर विश्वविद्यालय में इसे स्वीकृति देकर पी-एच.डी.की उपाधि से डॉ.शेष को गौरवान्वित किया । तब नाटककार शंकर शेष डॉक्टर शेष बने ।

---

२० डॉ.सुनीलकुमार लवटे - नाटककार शंकर शेष - पृ.११ ।

(२) छत्तीसगढी भाषा का शास्त्रीय अध्ययन --

डॉ.शेष का जन्म सामंती परिवार में हुआ था । उनके यहाँ अनेक नौकर चाकर थे । बच्चों की देखभाल घर की नौकर,नौकरानियाँ करती थीं । क्योंकि माँ हमेशा आने-जानेवालों की आवभगत में उलझी रहती । ये नौकर नौकरानियाँ छत्तीसगढ परिवेश की थीं । उनकी भाषा के प्रति शेष के मन में एक असाधारण जिज्ञासा थी । इस ललक से ही छत्तीसगढी भाषा का उन्होंने शास्त्रीय अध्ययन किया । मध्यप्रदेश ग्रंथ अकादमी ने उसका गौरव करके उसे प्रकाशित किया हैं । यह प्रबंध हिन्दी की बोलियों के विकास के अध्ययन की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है ।यह काम उन्होंने सन १९६५ में किया । नौकरी करते-करते वे छत्तीसगढी भाषा का अवलोकन,परिक्षान करते रहे । बोलियों का अध्ययन करना वैसे तो बहुत कठिन कार्य होता है। इसके लिए उन्हें आदिम जन जातियों की घने जगंलोंमें होनेवाली बस्तियो में घूमना पडा पर वैज्ञानिक के लिए आवश्यक जीव उनमें होने के कारण इस काम को भी उन्होंने सफलता से पूर्ण किया ।

(३) आदिम जाति शब्द संग्रह एवं भाषाशास्त्रीय अध्ययन --

सन १९६७ में छत्तीसगढी भाषा के शास्त्रीय अध्ययन के कारण सरकार ने उन्हें अनुसंधान संस्थान भोपाल में भाषा और संस्कृति विभाग के अनुसंधान अधिकारी के पद से गौरवान्वित किया । इस काल में उन्होंने आदिम जाति - शब्दावली का संग्रह किया । उसका वे भाषा शास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करना चाहते थे परंतु कार्यबहुलता से यह काम अधूरा रह गया ।

(४) जीवन के अतिम काल में वे बम्बई में स्टेट बॅन्क में राजभाषा विभाग के मुख्य अधिकारी बने । बैंकों में हिन्दी का प्रयोग कैसा बढा दिया जाए इसका उन्होंने मार्गदर्शन किया । बैंकों के लिए उपयुक्त हिन्दी पर्यायवाची शब्दों की सूचियाँ तैयार की । इस प्रकार हम देखते हैं कि डॉ.शेष यद्यपि सामंती परिवेश में जन्में किंतु वे सामंती संस्कारों से दूर रहे और उन्होंने मध्यवर्गीय जीवन अपनाया ।

(८) कविता --

डॉ.विनय के अनुसार ' हिन्दू संयुक्त परिवार की कर्मठता और रूढियों के बीच उनके व्यक्तित्व का संस्कार हुआ । किशोर अवस्था से ही उन्होंने कहानी, कविता, लिखना प्रारंभ कर दिया था । समय-समय पर उनका लेखन विद्यार्थी जीवन से पुरस्कृत भी हुआ । किन्तु यह साहित्यिक जीवन का प्रारंभ न होकर केवल बीज रूप था जो नागपुर में जाकर पल्लवित हुआ ।

' शेष जी का सन १९५९ से ६५ तक का काल रीवाँ एवं शहडोल के शासकीय कॉलेज में व्यतीत हुआ । चंद कविताएँ तथा कुछ कहानियाँ इस काल की उपलब्धि कही जा सकती हैं ।' [२१]

' डॉ.शेष की एक कविता श्रीमती सुधा शेष जी द्वारा उपलब्ध हुई है ।' [२२] वह अप्रकाशित है ।

(९) कहानी --

डॉ.शेष की एक कहानी ' चेहरे' उपलब्ध हो सकी है । भारतीय स्टेट बैंक के कर्मचारियों द्वारा प्रकाशित 'कलीग' नामक त्रैमासिक पत्रिका में वह सन १९७८ में प्रकाशित हो चुकी है ।' [२३] डॉ.विनय और अन्यों के पूर्वोक्त संकेतों से पता चलता है कि उन्होंने कहानियाँ भी लिखी थीं । परंतु वे अब उपलब्ध नहीं हैं । उनकी खोज होनी आवश्यक है ।

---

२१ डॉ.विनय - डॉ.शेष कृत : बाढ का पानी से - पृ.५ ।

२२ डॉ.शंकर शेष : एक कविता , परिशिष्ट - पृ.९ ।

२३ डॉ.शंकर शेष : ' चेहरे' कहानी, परिशिष्ट - पृ.१० ।

निष्कर्ष --

डॉ.शंकर शेष जी का व्यक्तित्व भी विशिष्ट था । उनके स्वभाव के कई पहलू नजर आते हैं । उनका व्यक्तित्व महान था । उसीतरह वह मिलनसार भी था । उनमें ज्यादातर आत्मसुधार की भावना होती थी । चरित्र संपन्न स्वभाव तथा विनम्र होने के कारण वे अन्य लोगों के दिल में रहते थे । पुस्तकों का उन्हें बडा शौक था । पढने के बाद उसपर वे चिंतन किया करते थे । वे एक अच्छे प्रशासक और आदर्श अध्यापक थे । अध्यापक होने के कारण वे अच्छा वक्ता भी थे । वे आशावादी और प्रसिध्दि से अलग रहनेवाले जीव थे ।

डॉ.शेष में बाल्यावस्था से ही साहित्यिक अभिरूचियाँ थी जो आगे चलकर पनप उठी । विशेषकर नाटयक्षेत्र का उनमें बडा आकर्षण था और वे एक समर्थ और प्रयोगशील नाटक कारके रूप में विख्यात हुए । डॉ.शंकर शेष एक प्रसिध्द नाटककार थे । उन्होंने नाटयविधा को प्रगति पथ पर लाने का महत्व का कार्य किया है । उन्होंने नाटयविधा के साथ-साथ अन्य विधाओंमें भी अपनी कलम का जादू दिखाया है । उन्होंने नाटक के साथ साथ एकांकी,दूरदर्शन,तथा चलचित्र,कथा,अनुवाद,उपन्यास,कविता तथा कहानी आदि विधाओंमें भी लेखन किया है । उन्होंने बालनाटकों का भी लेखन किया है । अल्पआयुमें डॉ.शेष ने अनुवाद,मौलिक सृजन से लेकर शोध समीक्षात्मक एवं पारिभाषिक शब्दावली तक जो काम किया है,उसे देखने से उनकी बहुविध प्रतिभा का और व्यक्तित्व का परिचय मिलता है,फिर भी उनकी अंतरात्मा नाटयक्षेत्र से जुडी हुयी थी ।